भ्रम

भाग – 1

कई बार काले-घने बादलों के कारण सूर्य की धूप बिल्कुल नहीं दिखती तथा दिन दहाड़े रात्रि की भाँति अन्धेरा छा जाता है तथा जब बादल **'फटते हैं'** तभी धूप की **कुछ किरणें प्रकट होती हैं**। परन्तु यह किरणें शीघ्र ही अलोप हो जाती हैं — क्योंकि हवा से फटे हुए **'बादल' फिर मिल जाते हैं**। इन बादलों का पानी जब वर्षा के रूप में **'बरस'** जाता है, तब **बादलों के पीछे छुपी हुई धूप पूरे यौवन पर प्रकट होती है।**

ठीक इसी प्रकार हमारे **मन** अथवा **अन्तःकरण के चारों ओर कई जन्मों से 'कर्मों' की मैल के 'बादल' छाए हुए हैं**। जब कभी पावन-पवित्र संगति में हमारे मन पर **शबद की चोट अथवा 'वैराग्य-मय' प्रभाव पड़ता है**, तब दिव्य मंडल की **क्षणभंगुर 'झलक' दिखाई देती है। हमारा 'मन' ऐसी दामनिक 'दैवीय-कला' का तेज़ नहीं सह पाता** तथा इस 'कला' का शरीर पर अलग-अलग प्रभाव पड़ता है। जिस प्रकार **बिजली के करंट को 'छूने' से** हमारा शरीर कई प्रकार की **हरकतें करता है** — उसी प्रकार **'आत्मिक कला' की मन पर 'दमक' या 'छुह' से शरीर भी बेबस होकर कई हरकतें करता है**। जैसे —

झटके लगना,
चीखें निकलनी,
अनोखी हरकतें करना,
सिहरन छिड़नी
'रुन-झुन' अनुभव करना
'मिर्गी' की भाँति तड़फना
ऊँची-ऊँची हँसना,

अत्यंत शक्ति का प्रकटाव होना

शारीरिक सुध-बुध खोना

आदि, **अनेक अलौकिक कौतुक जिज्ञासुओं के अनुभव में आते हैं, जिन्हें हमारी सीमित बुद्धि समझ नहीं सकती ।**

अन्तर आत्मा में **'आत्मिक कला' की 'छुह' द्वारा प्रकट हुए इन शारीरिक तथा मानसिक करिश्मों के विषय में :—**

आश्चर्य चकित होना,

शक करना,

किन्तु करना,

नुक्ताचीनी करनी,

पाखण्ड समझना,

विरोध करना,

वाद-विवाद करना,

'काला जादू' समझना,

मन मति समझनी,

हमारी **अज्ञानताभरी 'भूल' व भ्रम-भ्राति है ।**

दूसरी ओर **मन की एकाग्रता द्वारा उत्पन्न हुई मानसिक 'शक्ति' की —**

करामातें

तान्त्रिक जादू

जंत्र-मंत्र के करिश्में

योगियों के कौतुक

भूत-प्रेतों के प्रभाव अधीन 'खेलना'

कई प्रकार के मानसिक 'काले जादू'

सभी त्रिगुण 'मायिकी मंडल' के 'प्रदर्शन' हैं ।

ये दोनों अवस्थाएँ अलग-अलग **आत्मिक तथा मानसिक मंडल के 'प्रदर्शन' हैं**, जो एक दूसरे से **विलक्षण, 'विरोधी' तथा उल्ट हैं** ।

इन दोनों अवस्थाओं को **'एक समझना'** या एक दूसरे की 'तुलना' करनी, हमारी **गहन अज्ञानता तथा 'भ्रम-भुलाव' है** ।

यह **'आत्मिक कला' की क्षणभंगुर 'झल्कें' तथा कौतुक** हमारी अन्दरूनी **'आत्मिक शक्ति' के अस्तित्व के 'साक्षी' तथा 'गवाह' हैं — जिससे हमारी आत्मिक 'श्रद्धा' दृढ़ होती है — परन्तु इन क्षणभंगुर लिश्कों तथा कौतुकों को ही आध्यात्मिक मार्ग की 'मजिल' या 'मुक्ति' समझना** हमारा **गहन** मानसिक **'भ्रम-भुलाव' है** ।

इसी प्रकार सिमरन में मन एकाग्र होने पर, हमारे भीतर अनोखे प्रकार का **'प्रकाश' 'कौंधता' है**, कई बार यह 'प्रकाश' हमारे **मनोकल्पित ख्यालों का ही प्रतिबिम्ब होता है । इस आध्यात्मिक प्रकाश की चमक को ही अकाल पुरुष के 'दर्शन' समझना, हमारी बहुत बड़ी 'भूल' है** तथा सबल मानसिक **'भ्रम-भुलाव'** है ।

इस विषय को स्पष्ट करने के लिए निम्नलिखित वर्णन सहायक हो सकता है —

आत्मिक छुह की 'कला'	**मानसिक शक्ति के करिश्में**
आत्मिक मंडल का 'खेल' है ।	**मानसिक मंडल का 'खेल' है ।**
जीव के 'वश' नहीं ।	'जीव' की अहम् मयी क्रिया है ।
ईश्वरीय 'देन' है	मानसिक शक्ति है ।
लाभदायक है ।	हानिकारक है ।
सुखदायी है	दुखदायी है ।
'रुन-झुन' का आह्लाद है ।	**अहम् की कुढ़न है ।**
आज़ादी है ।	**बंधन है ।**
'एक' का दर्शन है ।	**'द्वैत भाव' है ।**
अनन्त शक्ति की झलक है ।	'सीमित' शक्ति है ।
प्रिम-खेल का चमत्कार है ।	**'अहम्' का प्रकटाव है ।**

'प्रिम-रस' है ।	**फीके विषयी रस हैं ।**
गुप्त खेल है ।	**मानसिक अनुभव है ।**
'अनहद झुनकार' है ।	**शारीरिक कष्ट है ।**
'अलमस्त मतवारा' है ।	**मानसिक मदहोशी है ।**
आत्म मार्ग के चमत्कार हैं ।	मायिकी मंडल की **क्रियाएं** हैं।
गुरू की 'नदरि करमि' है ।	**अहम् की प्रवृति है ।**
ईश्वरीय प्रकाश की 'छुह' है ।	**मानसिक अज्ञानता का 'अंधकार है ।**
'आत्म ज्ञान' है ।	**'भ्रम-भुलाव' है ।**

उपरोक्त विवरण से प्रकट होता है कि **अन्तर आत्मा में दिव्य ज्योति की 'छुह' की 'पारस-कला' का घटना, अथवा 'नाम' के प्रज्जवलित होने पर** भीतरी **'रुन झुन' छिड़नी —**

सतिगुरू की 'बख्शिश' है

'नदरि-करमि' (कृपा दृष्टि) है,

'ईश्वरीय देन' है,

जो साध संगति में विचरण करते हुए किसी **भाग्यशाली जिज्ञासु को प्राप्त होती है ।**

इसके **विपरीत** — मायिकी शक्ति के —

कौतुक

करामात

जादू

टोने

जंत्र

मंत्र

तंत्र

आदि, **सभ 'अहम् मयी' क्रियाएं हैं**, जो जीव को 'कर्म-बद्ध' करके **माया के**

जाल में फँसाये रखवती हैं ।

छाइआ छूछी जगतु भुलाना ।। (पृ. 932)

तंत्र मंत्र सभ अउखध जानहि अति तऊ मरना ।। (पृ. 477)

मड़ी मसाणी मूड़े जोगु नाहि ।। (पृ. 1190)

कबीर हरि का सिमरनु छाडि कै राति जगावन जाइ ।।
सरपनि होइ कै अउतरै जाए अपुने खाइ ।। (पृ. 1370)

तंत मंत रासाइणा करामाति कालखि लपटाए ।(वा. भा. गु. 1@19)

तंत्र मंत्र पाखंड करि कलहि क्रोधु बहु वादि वधावै। (वा. भा. गु. 1@18)

तंत मंत पाखंड लख बाजीगर बाजारी नचै। (वा. भा. गु. 28@2)

अन्य अनेक 'भ्रम-भ्रांतियों' के अतिरिक्त, 'मुक्ति' के विषय में कई भ्रम प्रचलित हैं।

'मुक्ति' के विषय में हमारी जानकारी या 'ज्ञान' —

सुना	—	सुनाया
पढ़ा	—	पढ़ाया
सीखा	—	सिखाया
समझा	—	समझाया है ।

जिसका जन्म-जन्मों से हम **अभ्यास करते आये हैं**, इसलिए ये **'भ्रम'** हमारे मन तथा अन्तःकरण में 'दृढ़' हो चुके हैं।

हमने अपने **'अहम्' की अज्ञानता में** —

पापों को ढकने
यम की सज़ा से बचने
आवागमन के चक्र से बचने
स्वर्ग की लालसा
सदैवीय सुख तथा आनन्द भोगने

के लिए, 'मुक्ति' को 'जीवन उद्देश्य' या 'माध्यम' समझा हुआ है ।

वास्तव में किसी **कैद या बंधन से छुटकारे या आज़ादी को 'मुक्ति' कहा जाता है ।**

अपने **'अहम्' की अज्ञानता के** अन्धेर खाते, अथवा **'भ्रम गढ़' में जीव सारी उम्र विचरण करता हुआ कर्म करता तथा परिणाम भोगता है ।** इन **'अहम्मयी' ख्यालों तथा कर्मों का** अनेक जन्मों से **निरन्तर अभ्यास** करते हुए —'जो मै कीआ सो मै पाइआ' के अटल नियम अनुसार —'जीव' अपने **कर्मों के 'भँवर' में कर्म-बद्ध' हो जाता है** तथा **'आवागमन' के निरन्तर चक्र में विचरण करता हुआ दुख भोगता रहता है ।**

यह सारी क्रिया **मायिकी मडंल के 'भ्रम-गढ़' का 'खेल' है।**

जिस प्रकार रात के 'अंधकार' में जो भी काम किये जायें वे, अधूरे, अपूर्ण तथा गलत होते हैं। इसी प्रकार मायिकी मडंल के अन्धकार अथवा **अज्ञानता में जो भी कर्म हम करते हैं वे 'अहम्मयी' होने के कारण थोथे, अधूरे तथा गलत होते हैं** तथा **'मुक्ति' का साधन नहीं बन सकते ।**

जिस प्रकार 'अंधकार' **अपने 'अंधकार' को दूर नहीं कर सकता । केवल प्रकाश से ही अंधकार को दूर किया जा सकता है ।**

इसी प्रकार **मायिकी अज्ञानता का 'अंधकार' हमारे 'भ्रम-गढ़' को तोड़ नहीं सकता ।** हम अपने **मायिकी कर्मों** में ही गलतान हो कर **'कर्म-बद्ध रहते हैं ।** दूसरे शब्दों में **अहम् मयी कर्मों के भँवर** अथवा **कर्मों की कैद से छुटकारा नहीं पा सकते अथवा मुक्ति नहीं हो सकती ।**

इसलिए मानसिक अज्ञानता में **अहम्मयी कर्मों द्वारा 'मुक्ति' की लालसा करनी** हमारा दीर्घ **'भ्रम-भुलाव' है ।**

मुकति पंथु जानिओ तै नाहनि धन जोरन कउ धाइआ ॥
अति संग काहू नही दीना बिरथा आपु बंधाइआ ॥ (पृ. 631)

कीए उपाव मुकति के कारनि दह दिसि कउ उठि धाइआ ॥
घट ही भीतरि बसै निरंजनु ता को मरमु न पाइआ ॥ (पृ. 703)

बिनु गुर सबद न छूटसि कोइ ॥
पाखंडि कीन्है मुकति न होइ ॥ (पृ. 839)

कबीर मुकति दुआरा संकुरा राई दसएं भाइ ॥

मनु तउ मैगलु होइ रहिओ निकसो किउ कै जाइ ॥ (पृ. 1367)

पूजा अरचा बंदन डंडउत खटु करमा रतु रहता ॥

हउ हउ करत बंधन महि परिआ नह मिलीऐ इह जुगता ॥ (पृ. 642)

इसका तात्पर्य यह है कि **जब तक हमारी अन्तर-आत्मा में 'आत्म-प्रकाश' अथवा शबद या नाम प्रज्जवलित नहीं होता — हमारे मन के 'भ्रम-भुलाव' दूर नहीं हो सकते** तथा अपने कर्मों के 'भँवर' से हमारा छुटकारा नहीं हो सकता अथवा हमारी **'मुक्ति' नहीं हो सकती।**

राम नाम बिनु मुकति न होई बूडी दूजै हेति ॥ (पृ. 75)

नानक नाम बिना को मुकति न होई ॥ (पृ. 161)

राम नाम बिनु मुकति न होई नानकु कहै वीचारा ॥ (पृ. 437)

कहत कबीर सुनहु रे लोई ॥

राम नाम बिनु मुकति न होई ॥ (पृ. 481)

बिनु नाम हरि के मुकति नाही कहै नानकु दासु ॥ (पृ. 663)

राम नाम बिनु मुकति न सूझै आजु कालि पचि जाता हे ॥ (पृ. 1031)

पूरै सतिगुरि बूझ बुझाई ॥

विणु नावै मुकति किनै न पाई ॥ (पृ. 1052)

भरमु भेदु भउ कबहु न छूटसि आवत जात न जानी ॥

बिनु हरि नाम को मुकति न पावसि

डूबि मुए बिनु पानी ॥ (पृ. 1127)

राम नाम बिनु मुकति न पावसि मुकति नामि गुरमुखि लहै ॥......

बिनु गुर सबद मुकति कहा प्राणी राम नाम बिनु उरझि मरै ॥

(पृ. 1127)

राम नाम बिनु मुकति न होई है तूटै नाही अभिमानै ॥ (पृ. 1205)

मुकति पाईऐ साधसंगति बिनसि जाइ अंधारु ॥ (पृ. 675)

जब बादशाह के घर बच्चा जन्म लेता है, तब उसे 'शहज़ादा' कहा जाता है । अपने पिता के समस्त गुण, अधिकार तथा जायदाद उसे **विरासत में स्वतः ही मिल जाती है** । जवान होने पर बादशाह आवश्यकता अनुसार अपने शहज़ादे को राज्य का कार्यभार सौंप देता है ।

दूसरी ओर, राज्य का प्रबन्ध चलाने के लिए अनेक अन्य —उच्च, मध्यम तथा निम्न श्रेणी के मंत्री, अहलकार, नौकर-चाकरों को, उनकी योग्यता तथा अनुभव अनुसार 'राज्य-अधिकार' दिये जाते हैं । इन अहल्कारों की तरक्की (promotion) इनकी ईमानदारी, मेहनत तथा योग्यता अनुसार होती है ।

ठीक इसी प्रकार अकाल पुरुष के दरबार में अनेक पुँगरी हुई रूहें ब्रह्म-ज्ञानी, गुरमुख जन शोभायमान होते हैं । **इस त्रिगुणी ब्रहमंड को 'उभारने' अथवा 'राह-दिखाने' या जीवों के कल्याण के लिए अकाल पुरुष समय-समय पर इन पुंगरी हुई रूहों को अपनी 'कला' प्रदान कर के संसार में भेजता है** ।

जब ऐसी **बख्शी हुई रूहें** अथवा अकाल पुरुष के **'शहज़ादे'** आदि दैवीय हुकुम अनुसार **संसार में भेजे जाते हैं**, तब **इन को गुरू, सतिगुरू, अवतार आदि कहा जाता है** । ये इस त्रिगुण मायिकी संसार के 'अहम्' के भ्रम में पलच रही रूहों को दिव्य मार्ग का सच्चा उपदेश देकर उनका कल्याण करते हैं । **ये गुरू-अवतार अकाल पुरुष के 'हुकुम' अनुसार अवतार धारण करते हैं तथा ईश्वरीय 'हुकुम' की कमाई करके सच्चे 'सच्चखण्ड' में जाकर बस जाते हैं** ।

जनम मरण दुहहू महि नाही जन परउपकारी आए ।।
जीअ दानु दे भगती लाइनि
हरि सिउ लैनि मिलाए ।। (पृ.-749)

जगत उधारण सेई आए जो जन दरस पिआसा ।।
उन की सरणि परै सो तरिआ
संतसगि पूरन आसा ।। (पृ.-207)

हम इह काज जगत मो आए ।।
धरम हेत गुरदेव पठाए ।। (बचित्र नाटक पा. 10)

सुणी पुकारि दातार प्रभु
गुरु नानक जग माहि पठाइआ । (वा. भा. गु. 1@23)

जुगि जुगि सतिगुर धरे अवतारी । (वा. भा. गु. 1@48)

दूसरी ओर कई 'जीवात्माएं' गुरूओं, तथा अवतारों से **प्रेरणा-उपदेश तथा मार्गदर्शन प्राप्त करके 'शब्द–सुरति' अथवा नाम-अभ्यास-कमाई करके सतिगुरु की खुशियाँ प्राप्त करती हैं ।**

ऐसे —

'नाम' अभ्यास कमाई करने वाले
शबद सुरति में लीन हुए
नाम रंग में रंगे हुए
गुरबाणी का 'रूप' हुए
सतिगुरू के बैखरीद सेवक
सेवा के पुँज
'हुकमी बंदे'
'प्रिम-प्याला' पीने वाले
अलमस्त मतवारे
गुरमुख प्यारे
महापुरुषों

को गुरबाणी में —

साधु
संत
भक्त
गुरमुख
महापुरुष

हरिजन

ख़ालसा

ब्रह्म ज्ञानी

आदि नामों से सम्बोधित कर सत्कार किया गया है ।

धंनु सु वंसु धंनु सु पिता धंनु सु माता जिनि जन जणे ।।
जिन सासि गिरासि धिआइआ मेरा हरि हरि
से साची दरगह हरि जन बणे ।। (पृ.-1135)

भगता की चाल सची अति निरमल नामु सचा मनि भाइआ ।।
नानक भगत सोहहि दरि साचै जिनी सचो सचु कमाइआ ।।
(पृ.-768)

हरि जन ऊतम ऊतम बाणी मुखि बोलहि परउपकारे ।। (पृ.-493)

जो जन हरि प्रभ हरि हरि सरणा
तिन दरगह हरि हरि दे वडिआई ।।
धंनु धंनु साबासि कहै प्रभु जन कउ
जन नानक मेलि लए गलि लाई ।। (पृ.-493)

संत पिआरे पारब्रहम नानक हरि अगम अगाहु ।। (पृ.-556)

कहु कबीर जन भए खालसे प्रेम भगति जिह जानी ।। (पृ.-655)

गुरमुखि परतीति भई मनु मानिआ
अनदिनु सेवा करत समाइ ।। (पृ.-1423)
जिन इक मनि हरि धिआइआ मेरी जिंदुड़ीए
तिन संत जना जैकारो राम ।। (पृ.-539&40)

गुरबाणी में इन बख्शे हुए गुरमुख प्यारों, संतों, 'भक्तों' की यूँ परख की है —

जिना सासि गिरासि न विसरै से हरिजन पूरे सही जाणि ।। (पृ.-651)

सो भगतु जो गुरमुखि होवै **हउमै सबदि जलाइआ राम ।।** (पृ.-768)

निरमल सोभा अम्रित ताकी बानी ॥
एकु नामु मन माहि समानी ॥
दूख रोग बिनसे भै भरम ॥
साध नाम निरमल ता के करम ॥ (पृ.-296)
से भगत हरि भावदे जो गुरमुखि भाइ चलनि ॥
आपु छोडि सेवा करनि जीवत मुए रहंनि ॥ (पृ.-233)
जिना सासि गिरासि न विसरै हरि नामां मनि मंतु ॥
धंनु सि सेई नानका पुरनु सोई संतु ॥ (पृ.-319)
गुरमुखि होइ सु करे वीचारु ओसु अलिपतो रहणा ॥
हरि नामु जपै आपि उधरै ओसु पिछै डुबदे भी तरणा ॥(पृ.-953)
आठ पहर निकटि करि जानै ॥ प्रभ का कीआ मीठा मानै ॥
एकु नामु संतन आधारु ॥ होइ रहे सभ की पग छारु ॥
संत रहत सुनहु मेरे भाई ॥ उआ की महिमा कथनु न जाई ॥रहाउ॥
वरतणि जा कै केवल नाम ॥ अनद रूप कीरतन बिस्राम ॥
मित्र सत्रु जा कै एक समानै ॥
प्रभ अपुने बिनु अवरु न जानै ॥ (पृ.-392)

ऐसे **उच्च पवित्र आत्मिक जीवन वाले बख्शे हुए गुरमुख प्यारे अथवा साधू, संत-महापुरुष संसार में 'कोई विरले' ही होते हैं ।**

जन नानक कोटन मै किनहू गुरमुखि होइ पछाना ॥ (पृ.-685)
ऐसे जन विरले संसारे ॥
गुर सबदु वीचारहि रहहि निरारे ॥ (पृ.-1039)
जिन्ह इक मनि धिआइआ तिन्ह सुखु पाइआ
ते विरले संसारि जीउ ॥ (पृ.-438)
तेरा जनु एकु आधु कोई ॥
कामु क्रोधु लोभु मोहु बिबरजित हरि पदु चीन्है सोई ॥ (पृ.-1123)
ऐसे जन विरले जग अंदरि परखि खजानै पाइआ ॥
जाति वरन ते भए अतीता ममता लोभु चुकाइआ ॥ (पृ.-1345)

कहन कहावन कउ कई केतै ॥
ऐसो जनु बिरलो है सेवकु जो तत जोग कउ बेतै ॥ (पृ.-1302)

जग महि उतम काढीअहि विरले केई केइ ॥ (पृ.-517)

हैनि विरलै नाही घणे फैल फकड़ु संसारु ॥ (पृ.-1411)

गुरमुखि विरला जाणीऐ सेवकु सेवक सेव करंदा । (वा. भा. गु.-26@11)

बुरे करनि बुरिआईआ भलिआई भलिआ ।
अवगुण कीते गुण करनि जगि साध विरलिआ ।(वा. भा. गु.-9@21)

परन्तु इन विरले महापुरुषों के मुकाबले तथाकथित साधु, संत, स्वामी, शंकराचार्य, 'महाराज', जगत गुरू, श्री 108, आदि नाम अधीन संसार में अनगिनत हस्तियाँ प्रवृत हैं, जिनका 'जीवन' उपरोक्त गुरबाणी की पक्तियों के अनुकूल नहीं होता ।

इसी लिए आम जनता — विशेष कर पढी लिखी श्रेणी इन **तथाकथित साधु संतो के तुच्छ जीवन को देख कर सच्चे पवित्र 'साधु-संतो' के अस्तित्व से मुनकर तथा अश्रद्धक हो जाती है । यहाँ तक कि 'साधु' 'संत' जैसे शब्दों से भी घृणा करने लगते हैं ।**

खाईयों में रहते हुए जिन्होंने सूर्य का **प्रकाश न देखा हो,** तब उनका **सूर्य के अस्तित्व से इन्कार करना बड़ी भूल है ।**

इसी प्रकार तथाकथित पाखण्डी साधु-संतों के **तुच्छ जीवन को देखकर, सच्चे-पवित्र, बख्शे हुए, गुरमुख, साधुओं, संतों, महापुरुषों के अस्तित्व से इन्कार करना** तथा इनसे सम्बन्धित 'शब्द'—'साधू-संत' **आदि से घृणित** (allergic) **होना हमारा बहुत बड़ा मानसिक भ्रम-भुलाव है ।**

जिन 'शब्दों' द्वारा, इन 'साधु'—'संतो'—'महापुरूषों' को गुरबाणी में हज़ारों बार **सत्कार तथा मान से प्रतिष्ठित व सम्मानित किया गया है — उन शब्दों से हम इतने घृणित (allergic) हो गये हैं कि उन का जिक्र भी सुनने के लिए तैयार नहीं । इस प्रकार, हम गुरबाणी के इन पवित्र 'शब्दों' का निरादर करते हैं ।**

यह हमारी —

अज्ञानता,

अहम् की ढिठाई, तथा

'भ्रम-भुलाव' है ।

गुरबाणी में इन शब्दों की उच्चता तथा प्रतिष्ठा को यूँ सम्मानित किया गया है —

साधू संगति होइ परापति ता प्रभु अपुना लहीऐ ।। (पृ. 713)

संतसगि अंतरि प्रभु डीठा ।।
नामु प्रभू का लागा मीठा ।। (पृ. 293)

हरि का सेवकु सो हरि जेहा ।।
भेदु न जाणहु माणस देहा ।। (पृ. 1076)

राम संत महि भेदु किछु नाही
एकु जनु कई महि लाख करोरी ।। (पृ. 208)

नानक ब्रहम गिआनी आपि परमेसुर ।। (पृ. 273)

हरि जन हरि अंतरु नही नानक साची मानु ।। (पृ. 1428)

इन 'शब्दों' की यहाँ तक महिमा की गयी है कि गुरू को भी 'गुरू साधू' अथवा साधु-रूप 'गुरू' कह कर सम्मानित किया गया है ।

गुर साधू अम्रित गिआन सरि नाइणु ।।
सभि किलविख पाप गए गावाइणु ।। (पृ. 1134)

गुर साधू संगति मिलै हीरे रतन लभन्हि ।। (पृ. 1416)

गुरु संत जनो पिआरा मै मिलिआ मेरी त्रिसना बुझि गई आसे ।। (पृ. 776)

गुरु संतु पाइआ प्रभु धिआइआ सगल इछा पुंनीआ ।। (पृ. 779)

गुरबाणी में साधू, संत, शब्द का प्रयोग 'एक वचनीय' तथा 'बहु वचनीय' दोनों रूपों में किया गया है ।

'गुरू' एक है — बहुवचन नहीं हो सकता, परन्तु 'साधु', 'संत', 'महापुरुष'— बहुवचन हो सकते हैं, जैसे —

'संत जना' मिलि हरि जसु गाइओ ।। (पृ. 720)

'संतन' सिउ मेरी लेवा देवी संतन सिउ बिउहारा ।। (पृ. 614)

'साध जना' कै सगि निसतरे ।। (पृ. 1147)

'साधा' सरणी जो पवै सो छुटै बधा ।। (पृ. 320)

जन नानक संगति साध हरि मेलहु हम **साध जना** पग राली ।।

(पृ. 668)

साधसंगति की भीर जउ पाई
तउ नानक हरि सगि मिरीआ ।। (पृ. 1209)

संत मंडल महि हरि मनि वसै ।। (पृ. 1146)

'साधु'-'संत'-'भक्त'-'महापुरुष' बहुत **उच्च-पवित्र आत्मिक अवस्था के प्रतीक हैं** तथा इतनी उच्च पवित्र आत्मिक 'खेल' यूँ आम **नहीं नज़र आ सकती** । यह **'आत्मिक खेल'**—

किसी भाग्यशाली जीव पर ही घटती है, इस कारण इस 'बख्शिश' का किसी **विरले के पास ही होना अनिवार्य है** ।

संसार में अमूल्य वस्तुएँ जैसे हीरे, रत्न, जवाहर आदि, **विरले ही होते हैं**, जिन की कीमत लाखों-करोड़ों की होती है । इसलिए यदि **असली 'साधु'-'संत' -'महापुरुष' विरले हैं**, तो उनके **मुकाबले अनगिनत नकली साधु संत होने भी अनिवार्य हैं** ।

ऐसे आत्मिक साधु, संत, महापुरुष, गुरमुख जन — **सतिगुरु के दर-घर से वरसाए हुए तथा बख्शे हुए होते हैं** और वे **सतिगुरू की आज्ञा में अभिलाषी आत्मिक जिज्ञासुओं के आत्मिक मार्ग में प्रेरक** तथा 'सहायक' होते हैं ।

गुरबाणी में इस विषय को यूँ दर्शाया गया है —

किरपा करे जिसु पार ब्रहमु होवै साधू संगु ।।
जिउ जिउ ओहु वधाईऐ तिउ तिउ हरि सिउ रंगु ।। (पृ. & 71)

संत का संगु वडभागी पाईऐ ।।
संत की सेवा नामु धिआईऐ ।। (पृ. & 265)

संत सहाई जीअ के भवजल तारणहार ॥ (पृ. 929)

साधू संगति होइ परापति ता प्रभु अपुना लहीऐ ॥ (पृ. 713)

साधसंगति कै आसरै प्रभ सिउ रंगु लाए ॥ (पृ. 966)

हरि जन वडे वडे वड ऊचे जो सतगुर मेलि मिलाईऐ ॥(पृ. 881)

इसीलिए **आत्मिक मार्ग पर चलने वालों को 'साध-संगत' अथवा संतो-महापुरुषों की 'संगति' के लिए यूँ याचना करनी सिखायी है ।**

नानक दासु इहै सुखु मागै
मो कउ करि संतन की धूरे ॥ (पृ.13)

ऐसी किरपा मोहि करहु ॥
संतह चरण हमारो माथा नैन दरसु तनि धूरि परहु ॥ (पृ.828)

साधसंगति कै अंचलि लावहु
बिखम नदी जाइ तरणी ॥ (पृ. 702)

होहु क्रिपाल सुआमी **मेरे संता संगि विहावे ॥** (पृ. 961)

कहु नानक प्रभ लोचा पूरि ॥
संत जना की बाछउ धूरि ॥ (पृ. 724)

ऐसे बख्शे हुए 'साधु'-'संतों'-'गुरमुखों' के अस्तित्व से इन्कार करना या **घृणित होना** हमारा दीर्घ मानसिक **'भ्रम-भुलाव' है ।**

दूसरी ओर अनगिनत तथाकथित साधु, संत, महापुरुष, महात्मा, औलिए बने बैठे हैं, जिन्हें जनता अपनी **मायिकी जरूरतों की पूर्ति के लिए मानती तथा पूजती है ।**

ऐसे तथाकथित साधु, संतों, भक्तों, महात्मा तथा स्वामियों की **हिन्दुस्तान में बहुलता है** तथा कई प्रकार के **तथाकथित मिशन के अनेक नामों के अधीन परदेशों में भी इनका बोल-बाला है ।**

मनुष्य अपने 'अहम्' के अधीन **'स्वार्थी है ।** इसलिए अपनी **मायिकी जरूरतों की पूर्ति के लिए यह हर प्रकार के उचित-अनुचित ढंग अपनाता है ।**

इन में से तथाकथित — साधु, संतों, महात्माओं की टेक लेनी **'सरल' साधन माना गया है ।**

इसलिए —

विवाह की लालसा

बच्चे की लालसा

नौकरी की लालसा

तरक्की (promotion) की लालसा

माया की भूख

सुख की लालसा

बीमारी के इलाज

दुखों-क्लेशों से बचाव

शान्ति की लालसा

पापों से बचने

यम से बचने

भूत-प्रेतों से छूटकारा

शत्रुओं से बदले

मुकदमें की चिन्ता

आदि — **अनेक मायिकी जरूरतों की पूर्ति के लिए हम इन तथाकथित साधु, संतों, महात्मा आदि के दरवाजे खट-खटाते हैं । जनता की 'आवश्यकता' अनुसार ऐसी तथाकथित धार्मिक 'दुकानें' भी अनगिनत खुली हुई हैं ।**

यह सब त्रिगुण मायिकी 'खेल-अखाडा' है तथा **हमारी अज्ञानता का सबल 'भ्रम-भुलाव' है ।**

परन्तु इन **नकली तथाकथित साधु-संतों की बहुलता से 'घृणित' हो**

कर असली पहुँचे हुए महापुरुषों के ‘अस्तित्व’ के विषय में —

इन्कार करना

नफरत करनी

निंदा करनी

घृणा करनी

वाद-विवाद करना

झगड़े करना

हमारी **मानसिक तथा धार्मिक अज्ञानता का दीर्घ**

भ्रम-भुलाव है ।

जिस प्रकार विद्या-विभाग में संचालक (Director of Education) तो एक ही होता है, परन्तु उसके अधीन अनेक श्रेणियों तथा स्तर पर योग्यता अनुसार —

प्राथमिक (Primary)

माध्यमिक (Middle)

उच्चत्तर-माध्यमिक (High)

पूर्व स्नातक (Under-graduation)

स्नात्कोत्तर (Post- graduation)

विशेषीकरण (Specialization)

के **पाठ्य-क्रम (Courses) पढ़ाने के लिए** —

अध्यापक (teachers)

प्रवक्ता (lecturers)

प्रोफैसर (Professors)

संकायाध्यक्ष (Deans)

प्रिंसीपल (Principals)

की आवश्यकता होती है ।

इसी प्रकार **धार्मिक तथा आध्यात्मिक विद्या के प्रचार के लिए भी** अनेक —

ग्रन्थी

रागी

कथावाचक

प्रचारक

विद्वान

ज्ञानी

मिश्नरी

पंडित

आचार्य

— **भी होने अनिवार्य हैं** — जो अपनी-अपनी योग्यता अनुसार प्रचार करते हैं ।

इस प्रकार ये धार्मिक श्रेणियाँ **होनहार रूहों को 'आत्मिक जीवन' अथवा 'शब्द-सुरति' या 'नाम-अभ्यास-कमाई' के लिए प्रेरित करती तथा सहायक होती हैं । यह त्रिगुण मायिकी मंडल की धार्मिक क्रिया है ।**

इस से ऊपर **आत्मिक मंडल की विद्या** अथवा **ब्रह्म-मंडल का 'तत्-ज्ञान'** गुरू की कृपा द्वारा, किसी विरले अभिलाषी जिज्ञासु को **बख्शे हुए साधु, संतों, महापुरुषों की संगति द्वारा ही प्राप्त हो सकता है ।**

करम धरम ततु गिआनु संता संगु होइ ।। (पृ. -521)

संतन बिनु अवरु न दाता बीआ ।।

जो जो सरणि परै साधू की सो पारगरामी कीआ ।। (पृ. -610)

साध कै संगि प्रगटै सुगिआनु ।। (पृ. -271)

संतन सिउ हम लाहा खाटिआ हरि भगति भरे भंडारा ।। (पृ. -614)

इसलिए गुरबाणी में दर्शाये तथा सम्मानित हुए साधु, संतो, गुरमुख प्यारों के अस्तित्व को नक्कारना हमारी गहन मानसिक अज्ञानता का **'भ्रम-भुलाव'** है ।

(क्रमशः............)

J J J